समीक्षा लेख

पादपनामकरण का इतिहास व परम्परा - एक वैज्ञानिक परिचय

करुणा[1]*, स्वाति आर्या[1], राजेश कुमार मिश्रा[2,3], भास्कर जोशी[2,4], अनुपम श्रीवास्तव[2]

[1]संस्कृत विभाग, पतंजलि विश्वविद्यालय, हरिद्वार, उत्तराखण्ड, भारत

[2]पतंजलि अनुसन्धान संस्थान, हरिद्वार, उत्तराखण्ड, भारत

[3]पतंजलि भारतीय आयुर्विज्ञान एवं अनुसन्धान संस्थान, हरिद्वार,उत्तराखण्ड, भारत

[4]पतंजलि विश्वविद्यालय, हरिद्वार, उत्तराखण्ड, भारत

*संवाद लेखक: करुणा

संस्कृत विभाग, पतंजलि विश्वविद्यालय, हरिद्वार-249405, उत्तराखण्ड, भारत

Email- swatikaruna.arya@prft.co.in

सारांश

अनुसन्धान मनुष्य का अंतर्निहित गुण है। मानवता की भलाई के लिए प्राचीन ऋषियों नें द्रव्यों का नामकरण उनके औषधीय उपयोग तथा स्वरूपात्मक विशेषताओं आदि के अनुसार किया, ताकि उपलब्ध द्रव्यों को पहचानने और उपयोग करने में कोई भ्रम न हो। समय की प्रगति के साथ अधिक से अधिक पादपों की खोज की गई जो स्वरूप के आधार पर समान थे लेकिन गुण, कर्म तथा उपयोग के आधार पर एक दूसरे से भिन्न थे, जिससे उनकी पहचान संदिग्ध होती गयी। पादपों की पहचान संदिग्ध होने के कारण पौधों के गहन स्वरूपात्मक विवरण की आवश्यकता महसूस हुई। आधुनिक वनस्पति विज्ञान ने उपलब्ध पादपों को पहचानने और वर्गीकृत करने के लिए कई विधियां प्रदान कीं। इसलिए नामकरण की विधियों में प्राचीन काल से लेकर आज 21वीं सदी तक बहुत से परिवर्तन देखे गये। अतः प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य कालानुक्रम से पौधों के नामकरण के लिए अपनाई गई विभिन्न विधियों पर चर्चा करना है।

Abstract

Research is an inherent quality of man. For the humanitarian benefit, ancient sages named the natural substances according to their medicinal uses and morphological characteristics, etc., to avoid the confusion in identifying and using the available substances. With the progress of time more and more plants were discovered which were similar in appearance but different from each other in terms of properties, functions and usages. Due to which their identification process became suspicious. Because of such doubts about the plant identification, a need was realised for a thorough morphological description of the plants. Modern botany provided many methods to identify and classify the available plants. Thus, the methods of plant nomenclature witnessed many changes from ancient times to the present day of the 21st century. Therefore, the purpose of the present paper is to discuss the various methods adopted for plant nomenclature chronologically.

परिचय

संसार के सभी द्रव्य नाम के द्वारा ही जाने जाते हैं। नाम निर्धारण के बिना पदार्थों का व्यवहार नहीं हो सकता। नाम के द्वारा ही वस्तु की पृथक् सत्ता एवं पहचान बनती है। प्रारम्भ में सृष्टि अव्याकृत (विभागरहित) थी। परमात्मा ने इस सृष्टि को वाणी के द्वारा नाम और रूप से व्याकृत (विभागयुक्त) कर दिया- 'इसका यह नाम है एवं यह रूप है' ताकि संसार का व्यवहार चल सके और इसलिए आज भी प्रत्येक वस्तु का नामरूप से ही व्यवहार होता है-

तद्धेदं तर्ह्यव्याकृतमासीत्तन्नामरूपाभ्यामेव व्याक्रियतासौनामायमिदं रूप इति तदिदमप्येतर्हि नामरूपाभ्यामेव व्याक्रियतेऽसौनामायमिदं रूप इति स एष इह प्रविष्ट।। (बृ.उ.1.4.7)[1]।

इस प्रकार स्पष्ट है कि सृष्टि के आरम्भ से ही नामकरण की परम्परा चली आ रही है। सर्वप्रथम परमात्मा ने ही वेदोक्त शब्दों के द्वारा नाम एवं अर्थों का ज्ञान कराया है। मनुस्मृति में उल्लेख मिलता है-

सर्वेषां च नामानि कर्माणि च पृथक् पृथक्।
वेदशब्देभ्य एवादौ पृथक्संस्थाश्च निर्ममे।। (मनु.1.21)[2]।

अर्थात् परमात्मा ने सृष्टि के आरम्भ में ही समस्त पदार्थों के नाम, भिन्न-भिन्न कर्म तथा पृथक्-पृथक् विभाग एवं व्यवस्थाएँ वेदों के शब्द से ही स्थापित किए अर्थात् वेदमंत्रों के माध्यम से सभी का ज्ञान कराया।

वैदिक वाङ्मय में पादपनामकरण

समस्त पदार्थों के समान ही पादपों की संज्ञाओं के आदिम स्रोत भी वेद ही हैं। वेदों में बहुत से वृक्षों का उल्लेख मिलता है, तद्यथा- शाल्मली, खदिर, शिंशपा, विभीतक, शमी, प्लक्ष, इक्षु आदि। अथर्ववेद, मैत्रायणी संहिता व अन्य ग्रंथों में इनका उल्लेख कृषित पौधों के रूप में मिलता है। वेदों में उपलब्ध पादपों की संख्या के विषय में विद्वानों में मतभेद है। मैक्डोनल एवं कीथ ने यह संख्या 260, वैद्य रामगोपाल शास्त्री ने 93 तथा डॉ. कपिलदेव द्विवेदी ने 286 मानी है। आचार्य प्रियव्रत शर्मा ने सम्पूर्ण वैदिक वाङ्मय (वेदसंहिता, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, गृह्यसूत्र, श्रौतसूत्र एवं कौशिकसूत्र आदि) में औषधिवाचक पदों की संख्या 941 मानी है। आचार्य बालकृष्ण ने वेदों में वर्णित वनस्पतियाँ नामक ग्रन्थ में विभिन्न वेदभाष्यकारों द्वारा मान्य वैदिक पादप शब्दों के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला है कि औषधीय पादपों के रूप में मान्य 89 वैदिक पद निश्चित रूप से औषधीय पादप हैं जो वैदिक काल से आज तक प्रचलित हैं। 88 वैदिक पद ऐसे हैं जिन्हें विद्वानों द्वारा औषधीय पादप के पर्याय के रूप में चिन्हित किया गया है परन्तु वेदभाष्यों के अवलोकन से वे पादप प्रतीत नहीं होते। 21 वैदिक पद ऐसे हैं जो वेद के अनुसार पादपों के पर्याय तो हैं परन्तु वर्तमान में वह कौन- सा पादप है यह निश्चित करना अभी अनुसन्धान का विषय है (प्राक्कथन पृ.7) [3]।

वैदिक काल से ही भारतीयों को पलाश, कमल, श्वेतपुण्ड्रीक, नीलकमल, कुमुद, उर्वारुक, बदर, उदुम्बर, खर्जूर एवं बिल्व आदि फल व फूल देने वाले पौधों का ज्ञान था। बहुत से नाम वेदों से ही यथावत् चले आ रहे हैं। कुछ नाम कालक्रम से परिवर्तित हो गए, जैसे- गुल्गुलु को गुग्गुलु तथा कार्ष्मर्य को काश्मर्य कहने लगे। उत्तरोत्तर आयुर्वेदीय संहिताओं एवं निघण्टु ग्रन्थों में इन नामों की संख्या बढ़ती गई।

वैदिक औषधियों का नामकरण निम्न आधारों पर किया गया है-

उद्भव- बहुत-से वैदिक पादप नाम उत्पत्ति पर आधारित हैं जैसे- वर्षाभू।
स्वरूप- कुछ वैदिक नाम पादपों के स्वरूप पर आधारित हैं जैसे- नीलकमल।
अवयव- वेदों में पादपों के अवयवविशेष को आधार बनाकर भी नामकरण हुआ है जैसे- चित्रपर्णी, हिरण्यपुष्पी।
गुण- वेदोक्त पादपनाम गुणों पर भी आधारित हैं जैसे- मधुला।
कर्म- बहुत-से वैदिक पादप नाम कर्म पर आधारित हैं जैसे- त्रायमाणा, केशवर्धनी आदि।
आख्यान- कुछ वैदिक नाम आख्यानों पर आधारित हैं जैसे- अश्वत्थ।

इसके अतिरिक्त वेदों में ऐसे भी बहुत-से नाम हैं जो पशु-पक्षियों से सम्बन्धित हैं जैसे- काकमाची, नाकुली, सर्पगन्धा, अश्ववार, अश्वगन्धा आदि।

आयुर्वेदीय वाङ्मय में पादपनामकरण

आयुर्वेदीय वाङ्मय में यदि संहिताओं की बात करें तो प्राचीन समय में वनस्पतियों के स्वरूपात्मक वर्णन की परम्परा नहीं थी। बहुत कम स्थलों में ही औषधियों के स्वरूप का उल्लेख किया गया है। इनमें मुख्यत गुणकर्म एवं प्रयोग का ही विस्तारपूर्वक वर्णन किया जाता रहा है। इसके बाद आरम्भिक निघण्टुओं में भी वनौषधियों के गुणकर्म एवं आमयिक प्रयोग तो बताए गए किन्तु वनस्पति-परिचय इनमें भी नहीं दिया गया। इस अभाव की पूर्ति के लिए परवर्ती निघण्टुओं में विभिन्न पर्यायों का सृजन किया गया जिनके माध्यम से वनस्पति के आकार-प्रकार, उद्भव एवं गुणकर्म का बोध हो सके। निघण्टुओं में नामों की विस्तृत शृंखला मिलती है, जिसमें नामकरण के लिए विविध आधारों को अपनाया गया है, तद्यथा-

धन्वन्तरिनिघण्टुः- सर्वप्रथम धन्वन्तरिनिघण्टु में जाति, आकृति, वर्ण, वीर्य, रस एवं प्रभाव आदि को द्रव्यों के नामकरण का आधार बताया है-

एकं तु नाम प्रथितं बहूनामेकस्य नामानि तथा बहूनि ।
द्रव्यस्य जात्याकृतिवर्णवीर्यरसप्रभावादिगुणैर्भवन्ति।। (ध.नि.प्र.- 9)[4]।

इनके क्रमशः उदाहरण हैं-

जाति- जाति का अर्थ 'उत्पत्ति' है। निघण्टुगत हैमवती, शैलजा, वंशजा, यवसम्भवा इत्यादि पादपसंज्ञाएँ जाति पर आधारित हैं।

आकृति- आकृति से द्रव्य का स्वरूप अभिधेय है जैसे- गजदन्तफला, कुम्भफला, व्यालपत्रा, दीर्घपर्णी, इन्दुलेखा इत्यादि नाम आकृति पर आधारित हैं।

वर्ण- वर्ण से तात्पर्य द्रव्यों के विविध रंगों से है। निघण्टुगत पीतिका, रक्ता, वृन्ताक, श्यामा, कृष्णा, सिता, हेमा इत्यादि नाम वर्ण के आधार पर उपलब्ध होते हैं।

वीर्य- वीर्य से तात्पर्य 'कर्म करने के सामर्थ्य' से है। निघण्टुओं में बहुत से नाम वीर्य पर आधारित है तद्यथा- गुरु (कपिकच्छु), लघुः (लामज्जक), स्निग्ध (एरण्ड), रूक्ष (धन्वन), शीत (प्रभद्र) एवं उष्ण (पित्त)।

रस- चरकसंहिता (सू.1.64)[5] के अनुसार- 'रस्यत आस्वाद्यत इति रसः' अर्थात् रसनेन्द्रिय के द्वारा जिस विषय का ग्रहण किया जाता है, उसे रस कहते हैं। इस निरुक्ति के अनुसार मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त, कषाय आदि छः आस्वादों को रस कहा जाता है। आयुर्वेद में बहुत से औषध द्रव्यों के नाम रस पर आधारित हैं- कटुका (कुटकी), मधुर (जीवक), तिक्ता (गुडूची), अम्लपत्री (पलाशी), कषाया (दुरालभा), लवणा (तेजोवती), रसोन (लहसुन)।

प्रभाव- रस, वीर्य और विपाक समान रहने पर भी जिससे द्रव्य में विशिष्ट कर्मसामर्थ्य दिखाई देता है उसे 'प्रभाव' कहते हैं। अष्टाङ्गहृदय (सू.17.52)[6] में कहा है- रसादिसाम्ये यत् कर्म विशिष्टं तत् प्रभावजम्। वृष्या, मेध्या, वातारि, कृमिहा इत्यादि नाम प्रभाव पर आधारित है।

सोढलनिघण्टुः- सोढल ने भी धन्वन्तरिगत उपर्युक्त जाति आदि को ही नामकरण का आधार माना है-

रसाद् वीर्याद् विपाकाञ्च प्रभावादाकृतेः क्वचित्।
वर्णाज्जातेः प्रदेशाच्च गुणेभ्योऽपि भवन्ति हि।। (सो.नि.प्र.4)[7]

राजनिघण्टुः- द्रव्यों के नामकरण के सन्दर्भ राजनिघण्टुकार नरहरि पण्डित का मत विशेषतः उल्लेखनीय है। इस निघण्टु में सर्वप्रथम द्रव्यों के नामकरण के निश्चित सात आधार बताए गए हैं। जिनके अन्तर्गत उपरोक्त एवं अर्वाचीन विद्वानों द्वारा सम्मत समस्त नामकरण के आधार समाहित हो जाते हैं-

नामानि क्वचिदिह रूढितः स्वभावात्
देश्योक्त्या क्वचन च लाञ्छनोपमाभ्याम्।

वीर्य्येण क्वचिदितराह्वयातिदेशाद्
द्रव्याणां ध्रुवमिति सप्तधोतिदानि।। (रा.नि.प्र.8)[8]

(1) रूढि (2) प्रभाव, (3) देश्योक्ति, (4) लाञ्छन, (5) उपमा, (6) वीर्य, (7) इतराह्वयातिदेश। इनका विवरण इस प्रकार है-

रूढि- रुह (बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च) धातु से क्विन् प्रत्यय करने पर रूढ़ि शब्द सिद्ध होता है। जिसका अर्थ है 'उगना व वृद्धि करना'। इस प्रकार इसके अन्तर्गत हम द्रव्यों के उद्भव (उत्पत्ति) एवं विकास (वृद्धि का प्रकाश) को इंगित करने वाले नामों को रख सकते हैं। उद्भव भी पुनः देश, काल, अवयव एवं आवास आदि के भेद से अनेक भागों में विभक्त होता है। विकास को भी स्वरूप एवं काल के आधार पर दो भागों में बाँट सकते हैं। तद्यथा-

सारिणी 01 : रूढ़ि (उत्पत्ति) के आधार पर पादपनाम

रूढ़ि (उत्पत्ति) के आधार पर पादपनाम			
क्रमांक	संस्कृतनाम	रूढ़ि पर आधारित संस्कृतनाम	वानस्पतिकनाम
1.	पिप्पली	वैदेही- देश (विदेह देश में होने वाली)	*Piper longum* L.
2.	पुष्करमूलम्	काश्मीरम्- देश (कश्मीर में होने वाला)	*Inula racemosa* Hook. f.
3.	हिंगु	वाह्लीक–देश (वाह्लीक देश में होने वाला)	*Ferula narthex* Boiss.
4.	नारिकेल	दाक्षिणात्य- देश (दक्षिण देश में होने वाला)	*Cocos nucifera* L.
5.	गुञ्जा	काम्बोजी- देश (कम्बोज देश में होने वाली)	*Abrus precatorius* L.
6.	पुनर्नवा	वर्षाभू- काल (वर्षा ऋतु में उगने वाला)	*Boerrhavia diffusa* L.
7.	काश	शारद- काल (शरद् ऋतु में होने वाला)	*Saccharum spontaneum* L.
8.	नवमल्लिका	ग्रीष्मोद्भवा- काल (ग्रीष्म ऋतु में उगने वाली)	*Jasminum sambac* (L.) Aiton
9.	पर्णबीज	पर्णबीज- अवयव(पर्ण से उगने वाला)	*Bryophyllum pinnatum* (Lam.) Oken
10.	गुडूची	काण्डरुहा- अवयव (काण्ड से उगने वाली)	*Tinospora cordifolia* (Willd.) Miers
11.	वट	स्कन्धरुह- अवयव (स्कन्ध से उगने वाला)	*Ficus benghalensis* L.
12.	यास	मरूद्भव- आवास (मरुस्थल में उगने वाला)	*Alhagi camelorum* DC.
13.	बला	वाटी- आवास (मार्ग के किनारे उगने वाली)	*Sida cordifolia* L.
14.	तेजोवती	शैलसुता- आवास (पहाड़ों पर उगने वाली)	*Zanthoxylum alatum* Roxb.
15.	काश	नादेय- आवास (नदी के पास होने वाला)	*Saccharum spontaneum* L.
16.	अतःयम्लपर्णी	अरण्यवासिनी- आवास (जंगल में होने वाली)	*Vitis carnosa* (Lam.) Wall.
17.	पाटली	अम्बुवासी- आवास (जल में होने वाली)	*Stereospermum chelonoides* (L.f.) DC
विकास के आधार पर			
1.	बन्धूक	मध्यन्दिन- काल (दोपहर में खिलने वाला)	*Pentapetes phoenicea* L.
2.	तण्डुलीय	मेघनाद- काल (मेघ की ध्वनि से विकसित होने वाला)	*Amaranthus spinosus* L.
3.	विकङ्कत	गर्जाफल- काल (मेघ की गर्जना से फलने वाला)	*Flacourtia indica* (Burm.f.) Merr.
6.	बकुल	शारदिक- काल (शरद् ऋतु में पुष्पित होने वाला)	*Mimusops elengi* L.
7.	पाटली	वसन्तदूती- काल (वसन्त की सूचना देने वाली)	*Stereospermum chelonoides* (L.f.) DC
8.	गुडूची	छिन्नरुहा- स्वरूप (काटने पर बढ़ने वाली)	*Tinospora cordifolia* (Willd.) Miers
9.	माषपर्णी	विसारिणी- स्वरूप (बहुत अधिक फैलने वाली)	*Vigna trilobata* (L.) Verdc.
10.	वट	न्यग्रोध- स्वरूप (नीचे की ओर बढ़ने वाला)	*Ficus benghalensis* L.
11.	तिलक	दग्धरुह- स्वरूप (दग्ध होने पर भी उगने वाला)	*Wendlandia heynei* (Schult.) Santapau & Merchant.
12.	कदली	सकृत्फला- स्वरूप (एक बार फलने वाली)	*Musa paradisiaca* L.

प्रभाव-

द्रव्यों में रस, वीर्य, विपाक आदि का साम्य होने पर भी कर्म में जो विशिष्ट शक्ति देखी जाती है, उसे प्रभाव कहते हैं। इस प्रभाव का कर्मरूप में ही बोध होता है। अतः कर्म पर आधारित नामों का समावेश इस वर्ग में किया गया है।

सारिणी 02 : प्रभाव के आधार पर पादपनाम

क्रमांक	पादप	प्रभाव पर आधारित संस्कृत नाम	वानस्पतिक नाम
1.	अजशृङ्गी	चक्षुष्या	*Gymnema sylvestre* (Retz.) R. Br. ex Sm.
2.	आमलकी	वयस्था	*Emblica officinalis* Gaertn.
3.	इंगुदी	शूलारि	*Balanites aegyptiaca* (L.) Delile.
4.	ज्योतिष्मती	मेध्या	*Celastrus paniculatus* Willd.
5.	कुटकी	आमघ्नी	*Picrorhiza kurrooa* Royle ex Benth.
6.	कुटज	संग्राही	*Holarrhena antidysenterica* (Roth) DC.
7.	मञ्जिष्ठा	ज्वरहत्री	*Rubia cordifolia* L.
8.	शल्लकी	हृद्य	*Boswellia serrata* Roxb. ex Coleb.
9.	त्वक्	मुखशोधक	*Cinnamomum zeylanicum* Blume

देश्योक्ति-

'देशस्येयं देशी' अतः इनिठनौ इस पाणिनीय सूत्र (5.2.115)[12] से तदस्य अस्तीति (वह इसका है) इस मतुबर्थ में 'इनि' प्रत्यय करने पर देशी शब्द सिद्ध होता है। इस प्रकार 'देशी' का अर्थ हुआ 'देश विशेष की' तथा 'उक्ति' का अर्थ है 'बोली' अर्थात् देशविशेष में बोली जाने वाली प्राकृत आदि भाषाएँ। इस प्रकार स्थानीय भाषाओं से सम्बंधित नामों को इस वर्ग के अन्तर्गत रखा गया है।

सारिणी 03 : देश्योक्ति के आधार पर पादपनाम

क्रमांक	पादप	देश्योक्ति पर आधारित संस्कृतनाम	वानस्पतिकनाम
1.	महाराष्ट्री	मरहट्टिका	*Phyla nodiflora* (L.) Greene
2.	श्योनाक	टुण्टुक	*Oroxylum indicum* (L.) Kurz
3.	बृहती	डोरली	*Solanum indicum* L.
4.	सैरेयक	झिण्टी	*Barleria prionitis L.*
5.	अमृता	गुडूची	*Tinospora cordifolia* (Willd.) Hook. f. & Thoms.

लाञ्छन-

'लाञ्छन' का अर्थ है- लक्षण या विशेषता। संख्या, वर्ण, आकार- प्रकार एवं लिंग आदि विशेषणों से युक्त द्रव्यों के नामों को इस वर्ग में संकलित किया गया है।

सारिणी 04 : लाञ्छन के आधार पर पादपनाम

क्रमांक	पादप	लाञ्छन पर आधारित संस्कृतनाम	वानस्पतिकनाम
1.	मूर्वा	त्रिपर्णी- संख्या (तीन पत्तों वाली)	*Marsdenia tenacissima* (Roxb.) Moon
2.	सातला	सप्तला- संख्या (सात पत्तों वाली)	*Euphorbia pilosa* L.
3.	नागबला	चतुष्फला- संख्या (चार फल हैं जिसमें)	*Grewia hirsuta* Vahl
4.	पटोल	पञ्चराजिफल- संख्या (पाँच रेखाओं से युक्त फल वाला)	*Trichosanthes dioica* Roxb.
5.	सुनिषण्णक	चतुष्पत्री- संख्या (चार पत्तियाँ हैं जिसमें)	*Marsilea minuta* L.
6.	नीलदूर्वा	शतमूला- संख्या (बहुत- सी मूल हैं जिसमें)	*Cynodon dactylon* (L.) Pers.
7.	माषपर्णी	कृष्णवृन्ता- वर्ण (कृष्ण है वृन्त जिसका)	*Teramnus labialis* (L.f.) Spreng.

8.	स्वर्णजीवन्ती	हेमपुष्पी- वर्ण (हेम, स्वर्ण के पुष्प हैं जिसके)	*Dregea volubilis* (L.f.) Benth. ex Hook.f.
9.	गुञ्जा	श्यामलचूडा- वर्ण (शीर्ष पर कृष्णवर्ण वाली)	*Abrus precatorius* L.
10.	श्वेतखदिर	श्वेतसार- वर्ण (श्वेत सार/निर्यास वाला खदिर)	*Acacia farnesiana* (L.) Willd.
11.	स्वर्णक्षीरी	स्वर्णक्षीरी- वर्ण (स्वर्ण/पीत क्षीर वाली)	*Euphorbia thomsoniana* Boiss.
12.	अम्बष्ठा	चित्रपुष्पी- वर्ण (चित्रित/धब्बेदार पुष्पों वाली)	*Hibiscus cannabinus* L.
13.	महेन्द्रवारुणी	दीर्घवल्ली- आकार (दीर्घ है जो वल्ली/लता)	*Citrullus colocynthis* (L.) Schrad
14.	कटुतुम्बी	बृहत्फला- आकार (बड़े फलों वाली)	*Lagenaria siceraria* (Molina) Standl.
15.	शण	दीर्घशाख- आकार (लम्बी शाखाओं वाला)	*Crotalaria juncea* L.
16.	पटोल	कर्कशच्छद- प्रकार (कर्कश हैं पत्र जिसके)	*Trichosanthes dioica* Roxb.
17.	कपिकच्छू	रोमवल्ली- प्रकार (रोमयुक्त वल्ली)	*Mucuna pruriens* (L.) DC.
18.	पातालगरुडी	दृढलता- प्रकार (दृढ़ है लता जिसकी)	*Cocculus hirsutus* (L.) W.Theob.
19.	शतपुष्पा	अवाक्पुष्पी- प्रकार (अधोमुख पुष्पों वाली)	*Anethum sowa* Roxb. ex Fleming
20.	शतावरी	अधरकण्टक- प्रकार (अधोमुख काँटों वाली)	*Asparagus racemosus* Willd.
21.	काकादनी	वक्रशल्या- प्रकार (वक्र/टेढ़े- मेढ़े काँटों वाली)	*Anamirta cocculus* (L.) Wight & Arn.
22.	धत्तूर	स्त्रीपुष्प- लिंग (स्त्रीपुष्प विद्यमान हैं जिसमें)	*Datura metel* L.

उपमा-

प्रकृत द्रव्य की किसी अन्य द्रव्य से संरचनात्मक समानता के आधार पर किये गये नामकरण को इस वर्ग में समाहित किया गया है। यह उपमा रूप, वर्ण एवं गुण के आधार पर हो सकती है।

सारिणी 05 : उपमा के आधार पर पादपनाम

क्रमांक	पादप	उपमा पर आधारित संस्कृतनाम	वानस्पतिकनाम
1.	माषपर्णी	हयपुच्छिका- रूप (अश्व की पुच्छ जैसे पत्र हैं जिसके)	*Teramnus labialis* (L.f.) Spreng.
2.	मिश्रेया	तालपर्णी- रूप (ताल के समान पत्रों वाली)	*Foeniculum vulgare* Mill.
3.	गोक्षुर	श्वदंष्ट्रक- रूप (कुत्ते की दाढ़ के समान फल हैं जिसके)	*Tribulus terrestris* L.
4.	शितिवार	स्वस्तिक- रूप (स्वस्तिक चिह्न की आकृति से युक्त)	*Celosia argentea* L.
5.	गिरिकर्णी	दधिपुष्पिका- वर्ण (दधि के समान श्वेत पुष्पों वाली)	*Clitoria ternatea* L.
6.	शंखपुष्पी	शंखपुष्पी- वर्ण (शंख के समान श्वेत पुष्पों वाली)	*Convolvulus pluricaulis* Choisy
7.	गुडूची	अमृतवल्ली- गुण (अमृत के समान गुणों वाली वल्ली/लता)	*Tinospora cordifolia* (Willd.) Miers
8.	तेजोवती	अग्निफला- गुण (अग्नि के समान उष्णफल हैं जिसके)	*Zanthoxylum alatum* Roxb.
9.	वृद्धदारक	अजांत्री- गुण (बकरी की आत्र की तरह विस्तार वाली)	*Argyreia nervosa* (Burm. f.) Bojer

वीर्य-

वीर्य एक प्रकार का गुण है जो द्रव्य की सामान्य शक्ति है। चरक (सू.26.13)[5]में भी कहा है- येन कुर्वन्ति तद् वीर्यम्। वीर्य के सन्दर्भ में विविध मत हैं तथापि- छ वीर्यों- गुरु, लघु, स्निग्ध, रूक्ष, शीत एवं उष्ण को विशेष मान्यता प्राप्त हैं। वस्तुत इस सात प्रकार के वर्गीकरण में वीर्य केवल उपलक्षण मात्र है क्योंकि रस, गुण एवं विपाक भी द्रव्य की सामान्य शक्ति होने के कारण इसके अन्तर्गत आ जाते हैं। गुणों से यहाँ गुर्वादि (शारीरादि) का ही ग्रहण करना चाहिए।

सारिणी 06 : वीर्य के आधार पर पादपनाम

क्रमांक	पादप	वीर्य पर आधारित संस्कृतनाम	वानस्पतिकनाम
1.	शतावरी	स्वादुरसा	*Asparagus racemosus* Willd.
2.	कटुतुम्बी	कटुफला	*Lagenaria siceraria* (Molina) Standl.

3.	ज्योतिष्मती	दुर्जरा	*Celastrus paniculatus* Willd.
4.	पटोल	कटुफल	*Trichosanthes dioica* Roxb.
5.	गुडूची	मधुपर्णिका	*Tinospora cordifolia* (Willd.) Miers
6.	मधुयष्टी	मधुवल्ली	*Glycyrrhiza glabra* L.
7.	काकोली	मधुरा	*Roscoea purpurea* Sm.
8.	तेजोवती	लवण	*Zanthoxylum alautm* Roxb.
9.	उदुम्बर	शीतफल	*Ficus glomerata* Roxb.
10.	उशीर	शीतमूलकम्	*Vetiveria zizanioides* (L.) Nash.
11.	पिप्पली	उषणा	*Piper longum* L.

इतराह्वयातिदेश-

इस समस्त पद में तीन पदों का समावेश है। जिनमें इतर का अर्थ है 'अन्य' आह्वय का अर्थ है 'नाम' तथा अतिदेश का अर्थ है 'आरोपित करना' अर्थात् एक द्रव्य पर दूसरे द्रव्य के नाम को आरोपित करना 'इतराह्वयातिदेश' कहलाता है। यह आरोप संरचना से सम्बंधित न होकर उपयोगिता अथवा ऐतिहासिक कथानकों से सम्बन्धित होता है, तद्यथा-

सारिणी 07 : इतराह्वयातिदेश के आधार पर पादपनाम

क्रमांक	पादप	इतराह्वयातिदेश पर आधारित संस्कृतनाम	वानस्पतिकनाम
1.	कपिकच्छू	वानरी (वानर के सदृश रोमयुक्त होने से)	*Mucuna pruriens* (L.) DC.
2.	ऋषभक	ऋषभ (वृष/बैल के सींग के समान कन्द वाला होने से)	*Malaxis muscifera* (Lindl.) Kuntze
3.	सोमवल्ली	धनुर्लता (धनुष के समान काण्डयुक्त होने से)	*Ephedra gerardiana* Wall. ex Stapf
4.	काकादनी	वायसी (कौआ के द्वारा सेवित होने से)	*Anamirta cocculus* (L.) Wight & Arn.
5.	शितिवार	कुक्कुट (कुक्कुट की कलगी के समान पुष्प वाला होने से)	*Celosia argentea* L.
6.	रक्तखदिर	याज्ञिक (यज्ञार्थ प्रयोग किया जाने से)	*Acacia catechu* (L.f.) Willd.
7.	अर्क	शिवपुष्पक (भगवान् शिव की पूजा में प्रयोग किया जाने से)	*Calotropis procera* (Ait) Dryand.
8.	वट	यक्षावास (यक्ष का अधिष्ठान माना जाने से)	*Ficus benghalensis* L.
9.	अश्वत्थ	बोधिद्रु (इस वृक्ष के नीचे भगवान् बुद्ध के द्वारा ज्ञान प्राप्त किया जाने से)	*Ficus religiosa* L.
10.	प्रियाल	ललन (ललनाओं द्वारा प्रयोग की जाने से)	*Buchanania cochinchinensis* (Lour.) M.R.Almeida
11.	चित्रक	अग्नि (अत:यधिक उष्ण होने से)	*Plumbago zeylanica* L.
12.	कुटज	शक्राह्व (वर्षा ऋतु में फलित होने से)	*Holarrhena antidysenterica* (Roth) Wall. ex A. DC.

आचार्य प्रियव्रत शर्मा ने राजनिघण्टुकार को उद्धृत करते हुए रूढ़ि के उदाहरण- आटरूष क, गुडूची, टुण्टुक आदि तथा देशयोक्ति के उदाहरण- मागधी, वैदेही, कालिंग, कैरात आदि दिए हैं। इसी प्रकार डॉ. संजीव कुमार लाले ने भी रूढ़ि के उदाहरण डोरली, टुण्टुक, लगुड, गुडूची, आटरूषक, काण्डीर, कट्वङ्ग एवं फाङ्ग तथा देश्योक्ति के उदाहरण मालवी, सिन्धूत्थ, कालिङ्ग, वाह्लीक, नैपाली, मागधी, तुरुष्क, कलिङ्ग एवं पेरुक आदि दिए हैं।

यहाँ देश्योक्ति पद से देश के नामों पर आधारित पर्यायों का ग्रहण युक्तिसंगत नहीं है। क्योंकि देश्योक्ति पद का विच्छेद है- (देशी+उक्ति) जिसमें 'देशी' का अर्थ होगा- देशविशेष (स्थानविशेष) से सम्बन्धित तथा उक्ति का अर्थ है- बोली। अतः स्थानीय बोलियों से सम्बन्धित नामों को 'देश्योक्ति' का उदाहरण मानना चाहिए। इसी प्रकार रूढ़ि पद यद्यपि व्युत्पत्तिरहित शब्दों का वाचक भी होता है किन्तु इस प्रकार के शब्दों का ग्रहण यहाँ देशयोक्ति पद से हो जाता है। अतः रूढ़ि के मुख्यार्थ (उत्पत्ति/जन्म) का ग्रहण करना उचित है। यह न केवल उचित ही है अपितु आवश्यक भी है क्योंकि यदि हम रूढ़ि का अर्थ उत्पत्तिपरक नहीं करेंगे तो ऐसे नाम जो उत्पत्ति पर आधारित हैं तथा संख्या में बहुत अधिक भी हैं, उनका समावेश राजनिघण्टुकार द्वारा विभक्त सात वर्गों के अन्तर्गत नहीं हो पाएगा। अतः यहाँ रूढ़ि से 'जन्म' एवं देश्योक्ति से 'स्थानीय बोली' का ग्रहण करना चाहिए।

आचार्य प्रियव्रत शर्मा के अनुसार पादप नामकरण के आधार

आयुर्वेदीय विद्वान् आचार्य प्रियव्रत शर्मा ने निघण्टुओं में उपलब्ध पर्यायों को 12 वर्गों में विभाजित किया है तथा इससे अधिक वर्गीकरण की सम्भावना भी दर्शायी है (पृ.22-23)।[9]

स्वरूपबोधक- अणु, न्यग्रोध पुनर्नवा, प्रसारिणी, जटामांसी

अवयवबोधक- पत्र- त्रिपर्णी, चतुष्पत्री, पञ्चाङ्गुल, दीर्घवृन्त। पुष्प- शतपुष्पा, नागपुष्प, शतदल। फल- मेषशृङ्गी, आवर्त्तनी, पृथुशिम्ब, तूलफल। बीज - इन्द्रयव, कृष्णबीज। काण्ड - त्रिवृत्, कालस्कन्ध, चक्राङ्गी। मूल- शतमूली, दन्ती, शुक्लकन्दा। क्षीर- पयस्या,

स्वर्णक्षीरी। ग्रन्थि– षड्ग्रन्था, ग्रन्थिपर्णी। कण्टक- गोक्षुर, तीक्ष्णकण्टक। सार- रक्तसार, पीतसार, निसारा। वल्कल- स्थूलवल्कल, दृढवल्कल। रोम- कपिरोमफला।
गुणबोधक- शब्द- गुंजा, घण्टारवा। स्पर्श- दुःस्पर्शा, खरमञ्जरी। रूप- कान्ता, रक्तयष्टिका। रस- मधुरसा, वरतिक्त, कटुका, अम्लिका। गन्ध- गन्धप्रियङ्गु, अश्वगन्धा, तीक्ष्णगन्धा, विट्खदिर। अन्यगुण- तीक्ष्णफल, मृदुच्छद, स्निग्धदारु। वीर्य- ऊषण, हिम। प्रभाव- क्रिमिघ्न
कर्मबोधक- वातारि, रेचन, वामक, मेध्य, कृमिघ्न।
उद्भवबोधक- योनि- कृमिजा, मृगनाभि। रोहण- काण्डरुहा, पर्णबीज। अधिष्ठान- जलज, वाप्य, वृक्षादनी।
लोकोपयोगबोधक- यज्ञिय, रथद्रुम, स्रुववृक्ष।
आख्यानबोधक- अमृतसम्भवा, रुद्ररेतस्।
इतिहासप्रसिद्धि- बोधिद्रुम (अश्वत्थ)।
प्रशस्तिबोधक- भद्रदारु, मङ्गल्या।
देशबोधक- उद्भव- मागधी, कलिंग, धन्वयास। व्यापार- वाह्लीक, धर्मपत्तन
कालबोधक- पुष्पकाल- वासन्त, शरद, ग्रैष्मिकी, प्रावृषेण्या
प्रियव्रत जी ने इस वर्गीकरण को उदाहरणमात्र कहा है तथा इसमें परिवर्धन की सम्भावना को दर्शाया है।

डॉ. संजीव कुमार के अनुसार पादप नामकरण के आधार:

डॉ. संजीव कुमार ने राजनिघण्टुकार द्वरा निर्दिष्ट सात विभागों के साथ- साथ प्रयोज्यांग (मूल, त्वक्, सार, निर्यास, नाल आदि), इन्द्रियार्थ (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध), पञ्चमहाभूत (पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश), कर्म (अश्मघ्न, कृमिघ्न आदि), व्यवहारोपयोग (चर्मरंगा, अर्थसाधन) आदि को भी नामकरण का आधार बताया है (पृ.14) [10]।
वस्तुत यदि प्रियव्रत जी एवं संजीव जी द्वारा प्रदर्शित नामों के वर्गीकरण/नामकरण के आधार पर विचार किया जाए तो इन सभी का समावेश राजनिघण्टुकार द्वारा निर्दिष्ट सात विभागों के अन्तर्गत हो जाता है। राजनिघण्टु को आधार बनाकर महौषधनिघण्टु में भी नाभ मकरण के सात विभाग दर्शाए गए हैं (महौ.नि.1.9-10) [11]। इस श्लोक की हिन्दी व्याख्या अत्यन्त अस्पष्ट है जिससे अर्थ की स्पष्ट अभिव्यक्ति नहीं हो रही है।
इस विवेचना से निष्कर्ष निकलता है कि राजनिघण्टुकार नरहरिपण्डित ही एकमात्र विद्वान् है जिन्होंने सर्वप्रथम नामकरण के निश्चित सात आधारों का निर्देश किया है तथा यह अत्यन्त प्रामाणिक एवं वैज्ञानिक है। समस्त निघण्टुओं में परिगणित द्रव्यों को इस पद्धति के अन्तर्गत समाहित किया जा सकता है।

ग्रीक काल (370 ई.पू.) से वर्तमान समय तक पादपों का वर्गीकरण एवं नामकरण [13-16]

- थियोफ्रास्टस (370-285 ई.पू.) जो अरस्तू एवं प्लैटन के विद्यार्थी थे। इन्होंने डी हिस्टोरिया प्लैन्टेरम नामक पुस्तक की रचना की थी, जिसमें 480 प्रजातियों का वर्गीकरण दिया गया था।
- प्लीनी द एल्डर (गेयस प्लिनियस सेकन्डस, 23-79 ई.) एक रोमन लेखक, प्रकृतिवादी, प्राकृतिक दार्शनिक, नौसेना एवं रोमन साम्राज्य के सेना अध्यक्ष और सम्राट वेस्पियन के मित्र थे। उन्होंने विश्वकोश नैचुरलिस हिस्टोरिया नामक पुस्तक की रचना की। वनस्पति विज्ञान की इस पुस्तक में इन्होंने कृषि विज्ञान, उद्यान विज्ञान, लता, जैतून एवं दवाओं का उल्लेख किया था।
- पेडैनियॉस डायोस्कोरॉइड्स (40-90 ई.) एक ग्रीक चिकित्सक थे, जिन्होंने 50-70 ई. के मध्य डी मैटेरिया मेडिका नामक पुस्तक की रचना की, जिसके अंतर्गत लगभग 600 प्रजातियों का वर्णन किया गया था। इस पुस्तक का उपयोग 16वीं शताब्दी में इसमें वर्णित औषधीय पौधों के लिए किया जाता था। इस पुस्तक में पादपों का वर्गीकरण उनके के औषधीय गुणों पर आधारित था। इस पुस्तक में वर्णित जिन्जिबेरी (जिन्जिक बर), ऐस्फोडेलॉस (ऐस्फोडेलस), स्किला (सिला), कैपेरिस (कैपेरिस) इत्यादि जैसे नाम डायोस्कोरॉइड्स द्वारा दिए गए थे, जो वर्तमान समय में वंश के रूप में उपयोग किए जा रहे हैं।
- प्लिनियस (23-79 ई.) ने नैचुरिलस हिस्टोरिया पुस्तक की रचना की थी, जिसमें उन्होंने कई पौधों का वर्णन किया और उन्हें लेटिन नाम दिए। चूंकि लेटिन को बाद में वनस्पति विज्ञान के लिए रखा गया था, इसलिए उन्हें वानस्पतिक लेटिन का पिता कहा जाता था।
- एल्बर्टस मैग्नस (1193-1280) द्वारा रचित डी वैजीटाबिलिस नामक पुस्तक 21 भागों में प्रकाशित थी। मैग्नस ने पादप जगत् को दो भागों में; जैसे-पर्णरहित पादप और पर्णयुक्त पादप में विभाजित किया था। पर्णयुक्त पादप को एकबीजपत्री और द्विबीजपत्री पादपों में विभाजित किया था।
- ओटो ब्रूनफेल्स (ब्रन्सफेल्स और ब्रॉन्सफेल्स) (1488-1534) जर्मनी के वनस्पतिज्ञ थे। कार्ल वॉन लिनीयस ने उन्हें 'वनस्पति विज्ञान का पिता' कहा था।
- ब्रूनफेल्स ने लेटिन भाषा में हरबैरम विवा आइकोन्स नामक पुस्तक लिखी थी जो 1536 में प्रकाशित हुई। प्रकृति में उपस्थित वनस्पति चित्रण को इस पुस्तक में शामिल करना उनका एक नया विचार था, जिसने इस पुस्तक को अन्य पुस्तकों से अलग बना दिया था। उनके नाम पर एक पादप वंश का नाम ब्रनफेल्सिया (कुल सोलेनेसी) रखा गया था।
- हिरोनिमस बॉक (1498-1554) जर्मनी के वनस्पतिज्ञ, चिकित्सक एवं लूटेरन के मंत्री थे। उनके द्वारा रचित पुस्तक न्यू क्रेटरबच (पौधों की पुस्तक) जो कि 1539 में प्रकाशित हुई। जिसके अंतर्गत जर्मनी में पाये जाने वाले पौधों का वर्णन, उनके नाम, उनकी विशेषताओं एवं 567 पौधों के औषधीय प्रयोगों का ही वर्णन किया गया था।
- लियोनहार्ट फुकस (लियोनहार्ड फुकस) (150-1566) जर्मनी के चिकित्सक एवं वनस्पतिज्ञ थे। उनकी डी हिस्टोरिया स्टिर्पियम कॉमन्टैरि इन्सिग्नीस नामक पुस्तक 1542 में लेटिन भाषा में प्रकाशित हुई थी। इसमें पौधों की लगभग 500 सही एवं विस्तृत आकृतियाँ हैं, जो काष्ठचित्र में बनाई गई थी।
- पिएट्रो एन्ड्रीया ग्रेगोरियो मैटिओली (मैथियोलस) एक चिकित्सक एवं प्रकृतिवादी थे, जिनका जन्म सिएना (इ्टली) में हुआ था। उन्होंने 100 नए पौधों का वर्णन किया और उनकी पुस्तक डिस्कॉर्सी (समीक्षा) डायोस्कोरॉइड्स के द मैटेरिया मेडिका (चिकित्सा वनस्पति विज्ञान) के समान थी। मैटिओली की पुस्तक का प्रथम संस्करण 1544 में इतालवी में प्रकाशित हुआ।
- वैलेरियस कॉर्डस (1515-1544) जर्मनी के चिकित्सक एवं वनस्पतिज्ञ थे, जो सर्वश्रेष्ठ औषधकोश और इतिहास में सबसे प्रसिद्ध जड़ी-बूटियों के लेखक थे। इन्होंने अपनी पुस्तक 'हिस्टोरिया प्लैन्टेरम' में पुष्पों एवं फलों, पराग एवं पुष्पक्रम के आधार पर पौधों की प्रजातियों एवं उनकी किस्मों की पहचान तथा उनका विस्तृत वर्णन किया था। पादप वंश कॉर्डिया इन्हीं के नाम पर रखा गया था।
- रेम्बर्ट डोडोन्स (1517-1585) हॉलैण्ड के वनस्पतिज्ञ थे, जिन्होंने स्टिर्पियम हिस्टोरिया (1583) नामक पुस्तक की रचना की, जिसमें नीदरलैण्ड के पादपों का वर्णन किया गया था।
- विलियम टर्नर (1515-1568) ब्रिटेन के वनस्पतिज्ञ थे, जिन्होंने लिबेलस डी री हरबेरिया नोवस (1538) नामक पुस्तक की रचना की, जिसमें उन्होंने ब्रिटेन मूल के अनेक पौधों के नामों, उनका विवरण एवं उनके प्राप्ति स्थान को वर्णित किया था। उन्हें ब्रिटेन के वनस्पति विज्ञान का जनक कहा जाता था।
- जॉन जोरार्ड (जॉन जोरार्ड) (1545-1612) ब्रिटेन के वनस्पतिज्ञ थे, जिन्होंने लंदन में अपने औषधीय उद्यान में रोपित पादपों पर पुस्तक लिखी थी। पादप वंश जेरार्डिया का नाम जेराई के सम्मान में दिया गया था।

16वीं एवं 17वीं शताब्दी के मध्य का समय 'औषधीय युग' के नाम से जाना जाता था। इस अवधि के दौरान पुस्तकों में औषधीय पौधों की सरल पहचान के लिए उनका विस्तृत वर्णन एवं अल्प वर्गीकरण लिखा जाता था। 'औषधीय युग' के बाद, पादपों का वर्गीकरण समय-समय पर विभिन्न वैज्ञानिकों द्वारा उनके बाह्य आकारकी के आधार पर दिया गया। जिनमें से कुछ महत्वपूर्ण वैज्ञानिकों का वर्णन निम्नलिखित है-

- एन्ड्रिया सीजलपिनो (1519-1603) इटली के वनस्पतिज्ञ थे, जिन्होंने 'डी प्लैन्टिस लिब्रि' (1583) नामक पुस्तक में 1500 प्रजातियों का वर्णन किया गया था। लिनीयस ने इन्हें 'प्रथम पादप वर्गीकरण-विज्ञानी' के रूप में माना था।
- गार्सिया डी ऑर्टा (गार्सिया डी ऑर्टा) (1501-1568) मुख्य रूप से गोवा में काम करने

वाले पुर्तगाल के उष्णकटिबंधीय औषधि वैज्ञानिक, भैषज-अभिज्ञान एवं पारंपरिक चिकित्सा के प्रथम अन्वेषक थे। इनके द्वारा 1563 में लिखी गई पुस्तक कोलोक्विस डॉस सिम्पलेस इ ड्रोगास ही कॉसस मेडिसिनेस डा इन्डिया में भारत के औषधीय एवं लाभप्रद पादपों का वर्णन किया गया था।

जीन बौहिन (1541-1631) फ्रांस के चिकित्सक थे, जिन्होंने हिस्टोरिया प्लैन्टेरम यूनि-वर्सेलिस नामक पुस्तक लिखी, जिसमें 5000 पादपों का वर्णन किया था और गैसपर्ड बौहिन (1560-1626) जिन्होंने 'फाइटोपिनैक्स, 'प्रोड्रोमस थेर्टि बोटैनिकी' एवं पिनैक्स थेर्टि बोटैनिकी' नामक तीन पुस्तकें लिखी। शब्द पिनैक्स का अर्थ पंजीकरण होता है, बौहिन ने 6000 पादप प्रजातियों को सूचीबद्ध किया।

जॉन रे (1627-1705) ब्रिटेन के दार्शनिक एवं प्रकृतिवादी थे, जिन्होंने मेथोडस प्लैन्टेरम नोवा और हिस्टोरिया प्लैन्टेरम (1686-1704) नामक दो पुस्तकें तीन भागों में लिखी; जिसमें 18000 पादप प्रजातियों को वर्गीकृत किया था। इन्होंने अपने वर्गीकरण में बीजयुक्त शाकीय पादपों को 25 द्विबीजपत्री एवं 4 एकबीजपत्री वर्गों में विभाजित किया था।

हेण्ड्रिक एड्रियन वान रीड टॉट ड्रेकेन्सटीन (1636-1691) 17वीं शताब्दी के सैन्य अधिकारी, डच ईस्ट इंडिया कम्पनी के औपनिवेशिक प्रशासक एवं प्रकृतिवादी थे। 1669 और 1676 के बीच उन्होंने हॉलैण्ड द्वारा शासित मालाबार क्षेत्र के राज्यपाल के रूप में कार्य किया था और इस क्षेत्र के 740 पौधों का वर्णन (वैद्य श्री इति अच्युतन के साथ) करते हुए हॉर्टस मैलाबैरिकस नामक पुस्तक लिखी।

हॉर्टस मैलाबैरिकस का पहला खंड 1678 में प्रकाशित हुआ था, जो दक्षिण भारत के मालाबार क्षेत्र के औषधीय पौधों का एक संग्रह था। यह पुस्तक 12 खण्डों में प्रकाशित हुई, जिनमें पादप नाम लेटिन, संस्कृत, अरबी एवं मलयालम चार भाषाओं में लिखे थे। वैद्य श्री इति अच्युतन जो कि एक बहुत बड़े आयुर्वेदाचार्य थे, उन्होंने पारम्परिक चिकित्सा की जानकारी ताड़ पत्र पर वर्णन करके दी थी। वॉन रीड ने जो विशिष्ट नाम मलयाली भाषा में दिए थे, वह लिनीयस ने अपनी पुस्तक और नामकरण में यथा स्थिति स्वीकार कर लिए थे।

पियेर मैग्नॉल 16वीं-17वीं शताब्दी में फ्रांस के वनस्पतिज्ञ थे। इन्होंने पादपों के कुलों की अवधारणा को सर्वप्रथम प्रकाशित किया था, जिसमें पौधों के समूहों का प्राकृतिक वर्गीकरण एवं समान्य विशेषताएँ हैं।

जोसेफ पिटॉन डी टर्नफॉर्ट 16वीं-17वीं शताब्दी में फ्रांस के वनस्पतिज्ञ थे, जिन्होंने सबसे पहले पादपों के लिए वंश का सिद्धांत और वंश एवं प्रजाति के मध्य भेद को बताया था। इन्होंने लगभग 700 वंशों में 7000 पादप प्रजातियों का वर्णन किया था, जो विशेष रूप से वास्तविक नहीं थे। हर्बेरियम (पादपालय) शब्द टर्नफॉर्ट के द्वारा दिया गया था।

रूडोल्फ जेकब कैमीरैरियस या कैमेरेर 16वीं-17वीं शताब्दी में जर्मनी के वनस्पतिज्ञ एवं चिकित्सक थे। इन्होंने अपनी पुस्तक डी सेक्सु प्लैन्टेरम ऐपिस्टोला (1694) में पादप के प्रजनन अंगों की जानकारी दी थी।

कैरोलस लिनीयस 17वीं शताब्दी में स्वीडन के प्रकृतिवादी थे, जिन्होंने अपनी पुस्तक हॉर्टस अपलैन्डिकस (1730) में वर्गीकरण की कृत्रिम (लैंगिक) पद्धति एवं अन्य पुस्तकें जेनेरा प्लैन्टेरम (1737) में 935 वंश और स्पीसीज प्लैन्टेरम (1753) में 6000 प्रजातियों का वर्णन किया था। इन्हें द्विनाम पद्धति का जनक कहा जाता है। लिनीयस की मृत्यु के बाद उनके दो छात्रों पीटर काम (1716-1779) एवं फ्रेडरिक हैसलक्वीस्ट (1722-1752) ने उनके द्वारा दिए गए वर्गीकरण को स्थापित किया था। लिनीयस ने पादप जगत् को पुंकेसर के आधार पर 24 वर्गों में बांटा था।

जोहान गोथे 17वीं 18वीं शताब्दी में जर्मनी के दार्शनिक और जीव विज्ञानी थे, जिन्होंने आकारकी शब्द दिया था।

माइकल ऐडन्सन (1727-1806) फ्रांस के वनस्पतिज्ञ एवं प्रकृतिवादी थे। इनकी पुस्तक फैमिलीस नैचुरेलीस डेस प्लान्टीस (1763) लिखी, जिसमें इन्होंने पादप कुलों के मध्य संबंधों, वर्गीकरण प्रणाली का उल्लेख किया।

ऐन्टोनियो डी जेसियु, बर्नार्ड डी जेसियु और जोसेफ डी जेसियु फ्रांस के तीन भाई और वनस्पतिज्ञ थे। बर्नार्ड डी जेसियु (1699-1777) ने पादप वर्गीकरण की डी जेसियु पद्धति को दिया था।

ऑगस्टिन पिरैमे डी कैन्डोल (1778-1841) फ्रांस के वनस्पतिज्ञ थे, जिन्होंने थीयोरी ऐलेमेन्टेयर डी ला बोटैनिक (1813) नामक पुस्तक लिखी एवं वर्गिकी शब्द दिया। इस पुस्तक में 30,000 पादपों को वर्गीकृत किया गया था।

जॉर्ज बैन्थम (1800-1884) और जोसेफ डॉल्टन हुकर (1817-1911) ने अपनी पुस्तक जेनेरा प्लैन्टेरम (1862-1883) में 7569 वंश तथा 202 प्राकृतिक गणों (199 आवृतबीजी और 03 अनावृतबीजी) में 97205 प्रजातियों को विस्तार पूर्वक वर्गीकृत किया था। इस प्रणाली को विभिन्न देशों में मान्यता प्राप्त हुई था विश्व के अधिकांश हर्बेरिया इसी वर्गीकरण प्रणाली द्वारा ही व्यवस्थित हैं।

ऑगस्ट विल्हेम आइक्लर (ऑगस्टस गुइलील्मस आइक्लर) (1839-1887) जर्मनी के वनस्पतिज्ञ थे, जिन्होंने विकास की अवधारणा को प्रतिबिंबित करने के लिए पादपों के वर्गीकरण की एक नई पद्धति विकसित की थी। आइक्लर पद्धति में पादप जगत् को दो भागों-एक पुष्परहित पादप एवं पुष्पयुक्त पादपों, में विभाजित किया था। इन्होंने सबसे पहले विकास की अवधारणा को स्वीकारा था, आइक्लर पहले वर्गिकीविज्ञानी थे, जिन्होंने पुष्पयुक्त पादपों में से आवृतबीजी एवं अनावृतबीजी को अलग करके आवृतबीजी पादपों एकबीजपत्री और द्विबीजपत्री में विभाजित किया था।

हेनरिक गुस्ताव ऐडॉल्फ ऐन्गलर (1844-1930) ने सलैबस डेर फ्लैन्जेनफैमिलीन (1903) नामक पुस्तक में पादप जगत का वर्गीकरण प्रस्तुत किया। जिसके अंतर्गत इन्होंने आवृतबीजी पादपों को दो वर्गों या क्लास एकबीजपत्री (11 गण) एवं क्लास द्विबीजपत्री में बांटा।

ऐडॉल्फ एन्गलर (1844-1930) और कार्ल प्रैन्टल (1849-1893) जर्मनी के वनस्पतिज्ञ थे, जिन्होंने डाई नेचुरलिचेन फ्लैन्जेनफैमिलीन नामक पुस्तक लिखी, जिसमें 286 कुल एवं 51 गणों का वर्णन किया था। उनके वर्गीकरण में परिदलपुंज युक्त द्विलिंगी पुष्पों की तुलना में परिदलरहित एकलिंगी पुष्प प्रारंभिक थे।

रिचर्ड वेट्सटीन (1863-1931) ऑस्ट्रिया के वनस्पतिज्ञ थे। इनके द्वारा रचित हैन्डबुक पुस्तक डेर सिस्टेमैटिसेन बौटैनिक (1901-1924) में प्रकाशित वर्गिकी पद्धति, जो वेट्सटीन पद्धति के नाम से जानी जाती है।

चार्ल्स ऐडविन बेसी (1845-1915) अमेरिका के वनस्पतिज्ञ थे। बेसी की वर्गीकरण पद्धति डी कैन्डोल, बेन्थम और हूकर एवं हैलीयर की पद्धति पर आधारित थी। बेसी ने अवृत्तबीजी पादपों को दो वर्गों आल्टनिफोलीएई (एकबीजपत्री) एवं ऑपोषिटिफोलीएई (द्विबीजपत्री) में विभाजित किया था।

जॉन हचिन्सन (1874-1972) ब्रिटेन के वनस्पतिज्ञ थे। जॉन हचिन्सन ने पादप वर्गीकरण की हचिन्सन पद्धति को दिया और द फैमिलीज ऑफ फ्लावरिंग प्लान्ट्स (1923-1934, 1959 तथा 1973) नामक पुस्तक को प्रकाशित किया, जिसमें उन्होंने एक नई पद्धति के अनुसार पौधों का वर्गीकरण किया।

ऑस्वाल्ड टिप्पो (1911-1999) ने 1942 में आंतरिक संरचना के आधार पर संवहनी और गैर-संवहनी पादपों के जातिवृत्तेय वर्गीकरण का प्रस्ताव दिया था।

अल्फ्रेड बार्टन रेन्डल (1865-1930) ब्रिटेन के वनस्पतिज्ञ थे। इनके द्वारा रचित पुस्तक द क्लासिफिकेशन ऑफ फ्लावरिंग प्लान्ट्स का पहला खंड 1904 एवं दूसरा खण्ड 1925 में प्रकाशित हुआ। इसका 1938 में नवीनीकरण हुआ और 1970 के अंत तक प्रभावी रहा।

कार्ल क्रिश्चियन मेष (1866-1944) जर्मनी के वनस्पतिज्ञ एवं विश्वविद्यालय के प्राध्यापक थे, जिन्होंने अपना वर्गीकरण रासायनिक गुणों के आधार पर दिया था।

अम्ब्रेन तख्ताजान (1910-2009) रूस के वनस्पतिज्ञ थे, जिन्होंने पहली बार आवृत्तबीजी पादपों के लिए मैग्नोलियोफाइटा का इस्तेमाल किया था। आवृत्तबीजी वर्गीकरण की तख्ताजान प्रणाली 1950 में कई संस्करणों में प्रकाशित हुई थी, उनकी पुस्तक डाइवर्सिटी एण्ड क्लासिफिकेशन ऑफ फ्लावरिंग प्लान्ट्स (1997) में समानांतर जातिवृत्तीय समूहों को स्वीकारा गया था।

ऑर्थर जॉन क्रोनक्विस्ट (1919-1992) अमेरिका के वनस्पतिज्ञ थे, जो सूर्यमुखी कुल के विशेषज्ञ थे। क्रोनक्विस्ट ने द इवोल्यूशन एण्ड क्लासिफिकेशन ऑफ फ्लावरिंग प्लान्ट्स' (1968, 1988) और एन इंटीग्रेटीड सिस्टम ऑफ क्लासिफिकेशन ऑफ फ्लावरिंग प्लान्ट्स (1981) में आवृतबीजी पौधों का वर्गीकरण दिया था।

रॉबर्ट एफ. थॉर्न (1920-2015) अमेरिका के वनस्पतिज्ञ थे उन्होनें पादप जगत् को 28 महागणों, 54 गणों, 75-उपगणों और 350 कुलों में बांटा। इनके द्वारा दी गई वर्गीकरण

प्रणाली की समस्याएँ सालों-साल संशोधित होती रहीं। इनका नवीनतम वर्गीकरण 2007 में इनके द्वारा रचित पुस्तक एन अपडेटिड क्लासिफिकेशन ऑफ द क्लास मैग्नोलियोप्सिडा ("एन्जियोर्स्पमीएर्इ") जेम्स एल. रीवील के साथ प्रकाशित हुआ, जिसमें 12 उपवर्ग, 35 महागण, 87 गण, 40 उपगण और 472 कुल सम्मिलित थे।

रॉल्फ मार्टिन थीयोडोर डेलग्रेन (1932-1987) स्वीडन-डेनमार्क के वनस्पतिज्ञ एवं 1973 में कोपेनहेगन विश्वविद्यालय के प्राध्यापक थे। इन्होंने 1980 में आवृतबीजी पादपों को दो उपवर्गों मैग्नोलिडेएर्इ (द्विबीजपत्री) एवं लिलिडेएई (एकबीजपत्री) में विभाजित किया था।

ए.पी.जी (एंजियोस्पर्म फाइलोजैनी ग्रुप)

सन् 1998 में पुष्पीय पादपों (आवृतबीज पादप) के लिए एंजियोस्पर्म फाइलोजैनी ग्रुप का प्रथम संस्करण प्रकाशित हुआ, जिसके अंतर्गत 462 कुलों को सम्मिलित किया था। एंजियोस्पर्म फाइलोजैनी ग्रुप का द्वितीय संस्करण 2003 में प्रकाशित हुआ, जिसमें 457 कुल, तृतीय संस्करण 2009 में प्रकाशित हुआ जिसमें 413 कुल और चतुर्थ संस्करण (2016) में आवृतबीज पादपों को 416 कुलों में बांटा था। वर्तमान वैज्ञानिकों के द्वारा यह स्वीकार्य है।

जिम्नोस्पर्म फाइलोजैनी ग्रुप (जी.पी.जी)-अनावृतबीजी पादपों के लिए।

टेरिडोफाइट फाइलोजैनी ग्रुप (पी.पी.जी.)-टेरिडोफाइट पादपों के लिए।

ब्रायोफाइट फाइलोजैनी ग्रुप (बी.पी.जी.)-ब्रायोफाइटा पादपों के लिए।

विमर्श- नामकरण की विधियों में समय-समय पर आवश्यकता के अनुसार अत्यधिक परिवर्तन हुए हैं। प्राचीन काल में, जब हर कोई प्रकृति और परिवेश के संपर्क में था तब प्राचीन ऋषियों को पौधों के रूपात्मक विवरण की आवश्यकता महसूस नहीं हुई और इसलिए उन्होंने गुण, कर्मादि विभिन्न आधारों पर सार्थक तथा वैज्ञानिक शब्दों का प्रयोग पादप नामकरण के लिये किया ताकि व्यक्तिगत स्तरों पर उपलब्ध द्रव्यों को पहचानने और उपयोग करने में कोई भ्रम न हो। समय की प्रगति के साथ तथा जिज्ञासा ने विद्वानों को अधिक से अधिक पौधों का पता लगाने के लिए प्रेरित किया, जो चिकित्सीय गुणों या आकारिकी में एक दूसरे से पूर्णतया भिन्न थे। शहरीकरण के साथ, मानव जाति और प्रकृति के बीच एक अंतर उत्पन्न हो गया जिससे पारंपरिक ज्ञान का खजाना धीरे-धीरे लुप्त या जानकारी के अभाव में सन्दिग्ध होता गया। इस ज्ञान के अभाव में पौधों के रूपात्मक विवरण की आवश्यकता उत्पन्न हुई और आधुनिक नामकरण विधियों में पादप के बाह्य तथा आंतरिक आकारिकी पर अधिक ध्यान दिया गया।

निष्कर्ष- नामकरण संबंधी आधुनिक विधियों तथा प्राचीन ऋषियों द्वारा प्रदत्त विधियों को साथ में रखकर यदि नामकरण की नयी पद्धति का उद्भव किया जाये तो पारम्परिक औषधीय ज्ञान के खजाने को संरक्षित किया जा सकता है, साथ ही, यह प्रभावी पद्धति के रूप में विकसित हो सकती है।

संदर्भग्रन्थ-सूची:

1. सिद्धान्तालंकार, सत्यव्रत (2000 ई.)। एकादशोपनिषत्। नई दिल्ली, भारत: विजयकृष्ण लखनपाल।
2. कौण्डिन्यायन, शिवराज (2010 ई.)। मनुस्मृति। वाराणसी, भारत: चौखम्बा विश्वभारती।
3. आचार्य, बालकृष्ण (2017 ई.)। वेदवर्णित वनस्पतियाँ। हरिद्वार, भारत: दिव्य प्रकाशन।
4. शर्मा, पी. वी. एवं शर्मा, जे. पी. (1982 ई.)। धन्वन्तरि निघण्टु। वाराणसी, भारत: चौखम्भा ऑरियन्टालिया।
5. त्रिकमजी, यादवजी (2019 ई.)। चरकसंहिता। वाराणसी, भारत: चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन।
6. पराडकर, हरि सदाशिव शास्त्रार (2010 ई.)। अष्टांगहृदयम्। वाराणसी, भारत: चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन।
7. शर्मा, पी.वी. (1978 ई.)। सोढलनिघण्टु। गुजरात (बरोदा), भारत: ऑरियन्टल इन्स्टिट्यूट।
8. बालकृष्ण, आचार्य (2019 ई.)। राजनिघण्टु, द्वितीय संस्करण। हरिद्वार, भारत: दिव्य प्रकाशन।
9. शर्मा, प्रियव्रत (2014 ई.)। द्रव्यगुणविज्ञान, भाग- 4। वाराणसी, भारत: चौखम्भा भारती एकादमी।
10. लाले, संजीव कुमार एवं जैन, गजेन्द्र कुमार (2003 ई.)। औषधनामरूपविज्ञानम्- भाग 1, प्रथम संस्करण। इन्दौर, भारत: विजयश्री पेपर प्रोडेक्ट लि.।
11. कुमार, आर्यदास (सं.2028, 1981 ई.)। महौषधनिघण्टु। वाराणसी, भारत: चौखम्भा भारती अकादमी।
12. जिज्ञासु, ब्रह्मदत्त (2018)। अष्टाध्यायीसूत्रपाठ। सोनीपत, भारत: रामलाल कपूर ट्रस्ट।
13. रोसलाएन, ए. (2019)। बोटनिकल नोमेनक्लेचर। भारत: एम. जे. पी.पी. पब्लिशर।
14. एरेफस्की, एम. (1997)। द एवॉलूशन ऑफ द लीनिअन हिआर्काई. बायोलॉजी एण्ड फिलोसफी 12:493–519.
15. पाण्डेय, एस. एन एवं मिश्रा, एस. पी. (2009)| टेक्सोनोमी ऑफ एंजियोस्पर्म | दिल्ली, भारत: एने बुक्स प्राईवेट लिमिटेड
16. स्मिथ, जेम्स पी. जूनियर (2017)| द साइंटिफिक नेम्स ऑफ प्लान्ट्स। बॉटेनिकल स्टडीस। 28: 1-13.

संक्षिप्ताक्षरसूची

च.सं.सू	-	चरकसहिंता सूत्रस्थान
ध.नि.	-	धन्वन्तरिनिघण्टु
बृ.उ.	-	बृहदारण्यक उपनिषत्
मनु.	-	मनुस्मृति
महौ.नि.	-	महौषधनिघण्टु
रा.नि.प्र.	-	राजनिघण्टु, प्रस्तावना
सो. नि.प्र.	-	सोढलनिघण्टु, प्रस्तावना